विश्व का सर्वाधिक संगठित समाज है हिन्दू समाज

संसार के सभी समाजों के संगठन के जो आधार होते हैं, वे सर्वविदित हैं। सर्वप्रथम तो यह आधार समान पूर्वजों के वंशज होने की स्मृति और अनुभूति के रूप में होता है। जब तक की स्मृति संभव है और विश्व में जो भी मानवीय इतिहास के विषय में स्मृतियाँ हैं, तब से 20वीं शताब्दी ईस्वी के मध्य तक समस्त हिन्दुओं को यह स्मरण था कि वे एक ही पूर्वजों की संततियां हैं जो सब के सब ऋषि रहे हैं और प्रजापति ब्रह्मा की ही संतति हैं।

प्रात : स्मरण के श्लोकों के रूप में अथवा अपनी-अपनी भाषा और बोलियों की कविताओं और कथाओं के रूप में तथा गोत्र और जाति यानी कुल समूह के पूर्वजों के रूप में सबको इन ऋषियों का स्मरण सदा से रहा है। कवियों और चारणों तथा वंशलेखकों और कथाकारों की अटूट श्रृंखला निरंतर इस सत्य का गांव-गांव और वनांचलों तक फैलाव करती रही है। इस प्रकार जो सबसे मूल आधार है, वह पूरे हिन्दू समाज में अभूतपूर्व रूप में उपस्थित है।

विश्व के अनेक प्राचीन समाजों को यह स्मरण था परन्तु उनमें से अधिकांश को ईसाइयों ने नष्ट कर दिया और शेष को मुसलमानों ने। दक्षिण पूर्व एशिया के अनेक समाजों में इसकी थोड़ी बहुत स्मृति बची है परंतु वहां भी यह मिटाई जा रही है। भारत में अभी तक करोड़ों लोगों में यह स्मृति शेष है।

ईसाइयों और मुसलमानों में संगठन का यह आधार अनुपस्थित है। क्योंकि वे अपने पूर्वजों की परंपरा को अस्वीकार करने के बाद ही ईसाई या मुसलमान बनते हैं। यहां हम कम्युनिस्टों की कोई बात करना प्रासंगिक नहीं समझते क्योंकि कम्युनिस्ट केवल व्यक्तियों की राशियां हैं, उनका कोई समाज आज तक कहीं बन नहीं पाया है। उनकी पार्टियां अवश्य हैं जो स्वयं ही एक दूसरे को खाती रहती हैं। अत : उनका समाज संगठन के संदर्भ में उल्लेख अनुचित होगा।

यूरोप में जो ईसाइयत फैली है, उसमें लगातार मूल वंशो की पहचान से इन पांथिक पहचानों का टकराव चलता रहता है। गोथ, हूण, वंडाल, मगयार, शक, पार्थ, मंगोल, एंगल्स, जूट, सेक्सन, रोमन, जर्मन, गॉल, वाईकिंग, स्कॉट, डेन, केल्त, ड्यूड, आयोनियन, चील्डियन, ब्रिटन, फ्रेंच, पुर्तगीज, स्पेनिश, स्कैंडिनेवियाई, स्वीड, बरो, कीव, पोल्स, बल्गार, नार्मन, ट्यूडर, बोहेमिया, कार्डोना, बाल्टिक आदि-आदि अनेक जातीय पहचाने अभी भी अपनी जगह हैं और उनके बीच वस्तुत : कोई एक आधार समाज संगठन की समान स्मृति के रूप में नहीं है।

इसके अतिरिक्त रोमन कैथोलिक, प्रोटेस्टेंट, पूर्वी आर्थोडॉक्स, ओरियन्टल आर्थोडॉक्स तथा चर्च ऑफ दि ईस्ट इन पांच मुख्य सम्प्रदायों में विभक्त ईसाई समुदायों की प्रत्येक शाखा में अनेकों पंथ हैं जो परस्पर प्रबल विरोध रखते हैं। इनमें से कैथोलिक ईसाई समस्त ईसाइयों का लगभग आधा भाग है। इनके रोमन कैथोलिक, आर्मेनियन, कॉपटिक, चार्डीयन, मैरोनाईट, बीजेन्टाइन आदि लगभग 50 से अधिक उप पंथ हैं। प्रोटेस्टेंट में उप पंथ कम हैं परंतु इंग्लैंड का प्रोटेस्टेंट चर्च अलग है और जर्मनी का अलग तथा इनमें एडवेंटिस्ट, बेपटिस्ट, एंग्लिकन, लूथरन, मैथोडिस्ट, पेंटेकोस्टल, कालविनवादी आदि अनेक उपपंथ हैं। सभी प्रोटेस्टेंट लोगों का मानना है कि वर्तमान कैथोलिक चर्च कतिपय 'भूलोंÓ से भरा हुआ है। प्रोटेस्टेंट ईसाइयों की अपनी एक अलग संस्कृति है।

इसके साथ ही इन दोनों में से प्रत्येक के पश्चिमी यूरोपीय, उत्तरी यूरोपीय, दक्षिणी यूरोपीय और केन्द्रीय यूरोपीय ऐसे चार यूरोपीय विभाग हैं और सहारा अफ्रीका, अमेरिका तथा आक्सेनिया के लिये

अलग विभाग हैं। पूर्वी आर्थोडाक्स चर्च के 23 उप पंथ हैं। इसी प्रकार चर्च ऑफ ईस्ट के चार बड़े उप पंथ हैं। जिनमें से एक भारत में विशेष रूप से सक्रिय है। वैसे तो सभी ईसाई यह मानते हैं कि जीसस ने स्वयं एक चर्च बनाया था परंतु यूरोप के सभी प्रबुद्ध लोग इस मान्यता का उपहास करते हैं। निष्ठावान ईसाई चर्च को एक दिव्य सत्ता मानते हैं। परंतु चर्च के विभिन्न पदाधिकारियों ने आज तक हत्याएँ, व्याभिचार, बलात्कार और लूट की तथा यौनविकृतियों की हजारों क्रियायें की हैं जिनके अभिलेखीय साक्ष्य विद्यमान हैं। स्वयं पोप के परिसर में बड़ी संख्या में भ्रूण हत्या के प्रमाण पाये गये थे। इन सब पापों के कारण भिन्न-भिन्न पंथों में जबरदस्त टकराव हैं। पांचो प्रमुख ईसाई सम्प्रदायों में से प्रत्येक का यह दावा है कि केवल वही शुद्ध चर्च है और शेष सब पतित और पापी हैं। कैथोलिक सम्प्रदाय से बाईबिल की व्याख्या को लेकर उपजे प्रचंड मतभेद के आधार पर प्रोटेस्टेंट चर्च विकसित हुआ।

इन सब के बीच बस एक ही बात समान है कि ये जीसस को दिव्यसत्ता मानते हैं और स्त्री पुरूष समागम को संसार के सब पापों में एकमात्र मूलपाप मानते हैं तथा वे यह भी मानते हैं कि मानवजाति इसी पाप में से जन्मी है और इसीलिये हर मनुष्य जन्म से पापी ही है परंतु मनुष्यों के इन पापों का प्रायश्चित जीसस ने दो प्रकार से किया – एक तो कुआंरी माँ से पवित्र प्रेत द्वारा गर्भधारण के उपरांत वे पैदा हुये अत : नर-नारी मिलन के पाप से वे अलिप्त हैं और दूसरे सूली पर चढ़ाये जाने के कारण उन्होंने उन सब मनुष्यों के पापों का प्रायश्चित कर लिया जो जीसस के पिता की शरण में आते हैं अर्थात् जो ईसाई बन जाते हैं।

यूरोप और अमेरिका के सभी प्रबुद्ध लोग और समस्त विश्व के प्रबुद्ध लोग ईसाइयों की इन दो आधारभूत मान्यताओं पर बहुत हंसते हैं परन्तु चर्च की नेटवर्किंग इतनी बड़ी और विकराल तथा जटिल है कि जो उसके फंदे में फंसा है वह तो उससे कभी निकलता ही नहीं और निकलने की सोचता ही नहीं, भारत सही विश्व के सभी धन-यौवन के लालची लोग भी चर्च से इन चीजों को पाते रहने के कारण उसकी इन हास्यास्पद मान्यताओं का अतिशय सम्मान करते हैं। इस प्रकार विशुद्ध सांसारिक व्यवस्था तंत्र के बल पर अपना प्रभाव बनाये रखने वाले चर्चों का दावा दिव्यता का ही है।

परंतु मूल बात समाज संगठन की है, चर्च समाज संगठन में अपने उपपंथ के स्तर पर अतिशय सफल हैं परंतु समस्त ईसाई समाज के संगठन की दृष्टि से पूर्णत : अक्षम और असफल हैं। इसीलिये यूरोपीय समाजों ने 19वीं शताब्दी के उत्तराद्र्ध में समाज संगठन के लिये राज्य को अधिक प्रभावी और सक्षम एजेंसी के रूप में अपनाया है। यद्यपि मध्ययुग में राज्य पर भी चर्च का ही एकाधिकार था परंतु 20वीं शताब्दी ईस्वी से चर्च स्वयं राज्य के संरक्षण की अपेक्षा करने लगा है।

जहां तक इस्लाम की बात है, इस्लाम में समाज संगठन का कोई भी आधार दिया ही नहीं है। वहां अपने पूर्वजों को जाहिल और जहालत में डूबे मानकर आखिरी रसूल को अपने माता-पिता और अपने बच्चों से भी ज्यादा प्यार करने के आग्रह से मजहब की शुरूआत होती है। यही कारण है कि इस्लाम ने अन्य समाजों के विध्वंस और बलपूर्ण धर्मान्तरण के भयंकर कार्य को बड़े पैमाने पर किया। परंतु समाज संगठन का कोई भी सूत्र वह कहीं भी नहीं दे पाया। परिणामस्वरूप हर समाज में इस्लाम के अलग-अलग रूप हैं और वे कुरान और हदीस की दो-चार बातों को अपनाने के बाद शेष या तो अपने इलाके के रीतिरिवाज चलाते रहते हैं या अपने पड़ोस के किसी मुल्क की नकल से काम चलाते रहते हैं।

यही कारण है कि अरब देशों का इस्लाम स्वयं अरब समाज को ही आज तक संगठित नहीं कर पाया और वे परस्पर युद्धरत समुदायों के रूप में ही 1400 वर्षों से लगातार सक्रिय हैं।

दूसरी ओर तुर्की का इस्लाम भरतवंशी तुरूष्क क्षत्रियों की अनेक प्राचीन परंपराओं और मान्यताओं को बनाये रखते हुये अल्लाह और उनके आखिरी रसूल तथा सलात और जकात को बनाये रखकर काम चलता है और राज्य की प्राचीन तुरूष्क परंपरा को तो कायम रखा ही है, उनकी शब्दावली तक अपनाये हुये है।

सर्वविदित है कि कुरान शरीफ में नमाज नामक कोई शब्द नहीं है। नमन करने के संस्कृत शब्द से पारसीकों और तुरूष्कों में नमाज शब्द चलता था और वही सलात के लिये भी प्रयुक्त होने लगा। इसी प्रकार हर व्यक्ति (खुदी) की अंतरात्मा में विराजमान खुदा की प्राचीन सनातन पंरपरा के प्रत्यय को ही अल्लाह के लिये भी प्रयुक्त किया जाने लगा। खुदा शब्द कुरान में कहीं नहीं है और खुदा की अवधारणा भी कुरान को मान्य नहीं है। क्योंकि खुदा वह है जो हर खुदी के भीतर बुलंद रहता है जबकि अल्लाह सातवें आसमान पर विराजमान ऐसी सत्ता है जिसका नूर सारी कायनात पर छाया रहता है परंतु इस कायनात के भीतर उसका कोई अंश नहीं है क्योंकि वह तो सातवे आसमान पर ही है। फिर भी पारसीकों और तुरूष्कों ने अल्लाह के स्थान पर खुदा शब्द को ही अपनाये रखा। इसीलिये अब नव-इस्लामवादी लोग खुदा हाफिज कहने पर आपत्ति जताते हुये अल्लाह हाफिज कहते हैं और यही कहने पर बल देते हैं। यह बात अलग है कि हाफिज भी अरबी का शब्द नहीं है, वह भारतीय-पारसीक मूल का शब्द है।

इसी प्रकार कजाक, उजबक, उइगर, आरमेनियाई, किर्गिज, ताजिक आदि प्रत्येक समाज में इस्लाम का रूप बिलकुल अलग-अलग है। इन सभी समाजों की भाषायें संस्कृत मूल से निकली और आज भी वहां पारंपरिक लोककथायें अधिक लोकप्रिय और व्यापक हैं जिनमें गैर मुस्लिम वीरों की और प्रेमियों की गाथायें हैं। इसी प्रकार उइगर लोग जब हिन्दू थे और जब बौद्ध हुये, दोनों ही समय विद्वानों के लिये बख्शी शब्द का प्रयोग चल रहा था जो भिक्षु का ही उइगर रूप था। मुसलमानों ने उनकी भाषा की लिपि अवश्य नष्ट की परंतु बहुत सी परंपरायें आज तक वहां जीवंत हैं और वही वहां के समाज संगठन का आधार है।

कजाक लोगों को इस्लाम से अधिक अपना कजाक देश प्रिय और पूजनीय लगता है और किर्गिज लोगों को अपना। इस्लाम कबूल करवाने के बाद किर्गिज लोगों की चित्रकला को बड़ी सीमा तक नष्ट किया गया क्योंकि मनुष्य या किसी भी जीव और प्राकृतिक रूप का चित्र बनाना इस्लाम में वर्जित है। परंतु अब वहां फिर से चित्रकला का उन्मेष हो रहा है।

इसी प्रकार किर्गिज लोगों में उनका अपना 'मानस' बहुत लोकप्रिय है जो कि बहुत बड़ा वीर गाथा काव्य है। अत : स्पष्ट है कि इस्लाम में समाज संगठन का कोई भी आधार नहीं है इसीलिये अलग-अलग देशों के अलग-अलग मुस्लिम समाज अलग-अलग ढंग से संगठित हैं और उनकी मान्यताओं तथा परंपराओं में बहुत अधिक भेद है। अन्यों के प्रति तीव्र घृणा का समान तत्व सब में है परन्तु वह तो एक प्रेरक वस्तु मात्र है। वह समाज संगठन का कोई आधार नहीं है।

समाज संगठन का अपने मूल वंश और मूल पूर्वजों तथा उनकी पंरपराओं की स्मृति के साथ ही एक

अन्य आधार दार्शनिक और आध्यात्मिक होता है। यह आधार बहुत महत्वपूर्ण होता है। आप जीवन और जगत के बारे में तथा परमसत्ता या दिव्यसत्ता के बारे में क्या विचार रखते हैं, इससे किसी समाज के संगठन के आधार स्पष्ट होते हैं। उदाहरण के लिये लार्ड जीसस और उनके पिता गॉड तथा दिव्य प्रेतात्मा (ट्रिनिटी) के विषय में मान्यताओं के भेद से ईसाइयत में सैकड़ों भेद वाले उपपंथ पैदा हुये। वे अपनी-अपनी मान्यताओं में इतने अधिक दृढ़ हैं कि शताब्दियों तक वे एक दूसरे के खून के प्यासे रहे।

जीसस के स्वरूप और प्रकृति को लेकर और उनके उत्तराधिकार को लेकर तथा ईसाइयत की मूल मान्यताओं और पंथ विद्या को लेकर तथा पोप की सर्वोच्चता को मानने या न मानने को लेकर ईसाइयों के अनेक सम्प्रदाय आपस में एक-दूसरे का खून पीते रहे। आरंभ से ही इनमें प्रचंड मतभेद रहे हैं। यहां तक कि कैथोलिकों के पंथ तो अनेक हैं ही, प्रोटेस्टेंट पंथ में भी कन्फेशन को लेकर और प्रार्थना की पद्धति और दिव्यभोज की विधियों को लेकर परस्पर अनेक मतभेद रहे हैं। रोमन कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट तो शताब्दियों तक एक दूसरे का खून पीते ही रहे हैं। स्वयं इंग्लैंड के कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट लोगों ने एक-दूसरे को बारम्बार बड़ी तादाद में जिंदा जलाया है, बस्तियां उजाड़ी हैं और क्रूरतापूर्वक हत्यायें की हैं। जब इंग्लैंड में प्रोटेस्टेंट लोगों का बहुमत हो गया तो उन्होंने आयरलैंड के कैथोलिक लोगों की हत्यायें शुरू की। फ्रांस में कथार लोगों की हत्यायें कैथोलिकों ने की। उधर कथार लोगों ने कैथोलिकों के 'गॉडÓ को 'सांसारिक गॉडÓ कहकर रद्द कर दिया। अनेक देशों में चार-पांच सौ वर्षों तक कैथोलिक लोग प्रोटेस्टेंट लोगों को विधर्मी कहते रहे हैं और मौका लगते ही उनकी मार-काट करते रहे हैं। कुछ शताब्दियों तक यह क्रम पूरे यूरोप में चलता रहा कि एक पंथ के ईसाई समूह में तलवारें आदि लेकर दूसरे पंथ की ईसाई बस्तियों पर टूट पड़ते और पूरे इलाके को जला डालते तथा भयंकर बर्बर व्यवहार करते।

कई बार ये झगड़े इन छोटी-छोटी बातों पर होते थे कि तुम्हारे चर्च में पवित्र मरियम का जो दूध रखा है, वह मरियम का नहीं है बल्कि भैंस का दूध है या कि तुम्हारे चर्च में जो ईसा की असली सलीब की लकड़ी के टुकड़े प्रदर्शित कर रखे हैं वे नकली हैं और मोहल्ले की किसी साधारण सी लकड़ी के टुकड़े लाकर रख दिये गये हैं और इन आरोपों के साथ केवल आरोप बाजी या बहस नहीं होती थी अपितु सामूहिक मारकाट होती थी और उनके बीच शास्त्रार्थ की कोई भी परंपरा विकसित नहीं हो सकी। इसी प्रकार चर्च में मरियम की मूर्ति रखी जाये या नहीं इस बात को लेकर अलग-अलग सम्प्रदायों में झगड़े होते रहे हैं।

एक ईसाई पंथ मानता था कि मरियम भी स्त्री है अत : उसके भी आत्मा नहीं थी।। पवित्र प्रेत ने उसके द्वारा रहस्यमय ढंग से जीसस को पैदा कर दिया। अत : जीसस तो पूजनीय है, मरियम नहीं। तो दूसरे पंथ का मानना था कि माता मरियम भी पूजनीय हैं और वे जीसस की माता हैं, इसलिये उनमें आत्मा है। जबकि अन्य स्त्रियों में आत्मा नहीं होती।
इसी प्रकार एक ईसाई संत को दूसरे पंथ वाला शैतान या ईविल कहता था और इस बात पर भी सामूहिक हत्यायें होती रहती थीं। इस तरह ईसाइयत के आधार पर कोई भी समाज संगठन आज तक संभव नहीं हुआ है। केवल उपपंथों के ही संगठन का आधार ईसाइयत और इस्लाम बनते रहे हैं।

इस दृष्टि से भी हिन्दू समाज अद्वितीय रूप से संगठित समाज है क्योंकि वह मानता है कि एक ही परमसत्ता संपूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त है और उससे परे भी वही है। इस सृष्टि का संचालन कतिपय

सार्वभौम आधारों से ही हो रहा है और इन आधारभूत नियमों को ही मूल धर्म या प्रथम धर्म या सनत धर्म या सनातन धर्म कहते हैं। समस्त प्राणी इन्हीं सार्वभौम नियमों के अनुशासन के अंतर्गत ही बरत सकते हैं। अत : मनुष्य मात्र के लिये जिन आधारभूत सार्वभौम नियमों को मानना आवश्यक है, वे सत्य, अहिंसा, अस्तेय, संयम तथा मर्यादित उपभोग और पवित्रता, संतोष, श्रेष्ठ लक्ष्यों के लिये कष्ट सहन, ज्ञान की साधना और सर्वव्यापी भागवत सत्ता में श्रद्धा – ये 10 सार्वभौम नियम मानवधर्म हैं इनका पालन तो सभी मनुष्यों को करना ही होगा। इनका पालन करते हुये उपासना संबंधी विवधतायें और विचित्रतायें और नवीनतायें तथा रीतियों की विविधतायें और अजीविका तथा अर्जन की अपने-अपने व्यवसाय से संबंधित विशेषतायें तथा दक्षता और निपुणता की शिल्पगत और कलात्मक तथा विद्यात्मक विविधतायें और विशेषतायें संबंधित व्यक्तियों और समूहों का स्वधर्म है। इसलिये सार्वभौम नियमों के अनुशासन में स्वधर्म पालन का समुचित अवसर सदा सबको सुलभ रहे, यह देखना राज्य का काम है और ऐसा देखने वाला राज्य ही संबंधित प्रजाजनों द्वारा सम्मानित होता है। राज्य का काम मार्यादा को बनाये रखना है और उसके लिये आवश्यक व्यवस्थायें करना है परंतु आधारभूत नियमों की रचना राज्य का विषय नहीं है और उन नियमों के उल्लंघन की भी कोई शक्ति राज्य को प्राप्त नहीं है।

ऐसी स्थिति में मर्यादा से संपन्न विविधता और परस्परता तथा अपने-अपने पूर्वजों के ज्ञान और शील का निरन्तर श्रद्धापूर्वक स्मरण करते हुये समस्त समाज के लोकमंगल के लिये कार्य करने वाले अपने सभी पूर्वजों का संपूर्ण समाज द्वारा निरंतर स्मरण और वंदन भारतीय राज्य और समाज संगठन के आधार रहे हैं और इस दृष्टि से हिन्दू समाज विश्व का सर्वाधिक संगठित समाज है। क्योंकि यह न तो एकपंथवादी है, न ही एकदेववादी है, न ही एकपुरूषार्थवादी है, ना ही एकमात्र पुरूषार्थवादी है और न ही एकमात्र वर्णवादी है तथा न ही किसी भी प्रकार की जड़ता या तमस का उपासक है । इसीलिये सर्वविध गतिशीलता तथा सहज उल्लसित जीवन प्रवाह हिन्दू समाज संगठन के मुख्य लक्षण हैं। इसमें किसी की भी विशेषता का निषेध नहीं है परंतु किसी की भी एकांतिक या एकमात्र श्रेष्ठता का पूर्ण निषेध है क्योंकि विभूति दर्शन हिन्दू समाज के आधारभूत दर्शन सूत्रों में से एक है। भगवान कृष्ण ने इसे ही गीता में विभूतियोग के रूप में वर्णन करते हुये स्पष्ट कहा है कि जो जो भी विभूतियां हैं, सत्व का उन्मेष विशेष है और जहां-जहां भी श्री की ऊर्जा है, वह सब हमारे ही अंश हैं। अत : ईश्वरीय अंशों की रूपगत और अस्तित्वगत विविधता तथा विराटता हिन्दू समाज संगठन का सर्वमान्य आधार होने से हिन्दू समाज विश्व का सर्वाधिक संगठित समाज रहा है।

परंतु जब से मनुष्यों के केवल भौतिक आकार को महत्व देकर उनकी इस आकारगत एकता को नस्ल का नाम दिया गया और नस्लों के आधार पर मानवजाति को विभाजित बताने का अवैज्ञानिक और अप्रामाणिक वर्गीकरण प्रचलन में लाया गया, तब से हिन्दू समाज संगठन को आधारभूत आघात पहुंचाया जाने लगा। कुछ लोग हिन्दुओं को केवल दैहिक नस्ल की तरह देखते हुये हिन्दू एकता की बात करने लगे जो मनुष्य के भीतर अंतर्निहित प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनंदमय कोशों की पूर्ण उपेक्षा करते हुये चलाया जा रहा वर्गीकरण है। यह सर्वथा अहिन्दू और अभारतीय वर्गीकरण है। नस्ल के आधार पर मनुष्य की पहचान निरर्थक है क्योंकि न तो उसकी प्रज्ञा का पता चलता, न ही शील का। साथ ही नस्ल को आधार मानने वाले लोग देहवादी या देहात्मवादी होते हैं और इसलिये वे अपने पूर्वजों के भी दैहिक अवयवों , विशेषताओं का ही स्मरण कर पाते हैं, उनकी बौद्धिक, मानसिक और

आध्यात्मिक विशेषताओं का नहीं। देहात्मवादी दृष्टि से ही कुछ संगठनों ने हिन्दू की परिभाषा गढ़ने की कोशिश की और यह मान लिया कि नास्तिक या कम्युनिस्ट या अन्य विदेशी मतवादों को मानने वाला भी हिन्दू ही है। यह हिन्दुत्व के विनाश के लिये कार्यरत समूहों के समक्ष मूढ़ समर्पण है।

निश्चय ही नास्तिकों और पाखंडियो को भी उनकी अपनी मर्यादा के अंतर्गत जीवन व्यवहार के अवसर देना भारतीय राज्य का सनातन कर्तव्य रहा है और ऐसा राज्य ही हिन्दू राज्य है। परंतु इसका यह अर्थ नहीं होता कि उन्हें भी हिन्दू कहा जाये। इसका केवल यह अर्थ होता है कि हिन्दू समाज नास्तिक और कम्युनिस्टों आदि को भी उस मर्यादा के अंतर्गत कार्य के पर्याप्त अवसर देता है, जिस मर्यादा के अंतर्गत वे हिन्दुत्व के विनाश की कोई घोषणा न कर सके और ना ही ऐसी कोई योजना बना सके या ऐसी कोई चर्चा कर सकें। क्योंकि ऐसी चर्चा करते ही और ऐसी योजनायें बनाते ही या घोषणायें करते ही वे सनातन हिन्दू आधारों के अनुसार आततायी कहलायेंगे और उन्हें देखते ही उनका वध करने का दायित्व या तो राज्य अपने सेवकों के द्वारा निभाये या समाज को अपने वीरजनों के द्वारा यह पुण्यकर्म करने दे और ऐसे पुण्यकर्म का राज्य अभिनन्दन करे, स्वागत करे।

इसके स्थान पर आततताईयों को हिन्दू समाज का सहज अंग मान्य करना हिन्दू समाज संगठन के आधारों के प्रति अश्रद्धा या अज्ञान का ही प्रमाण है। निश्चय ही हिन्दू समाज संगठन के समक्ष सबसे बड़ा संकट यही है कि लोकतंत्र में जनसंख्या के महत्व से भयभीत लोगों ने हिन्दू समाज को देहात्मवादी बनाने की ठान ली है और आततताईयों को समाज में समायोजित करने का अभियान ही चला रखा है। यह तो समाजवध के समकक्ष अपराध है। ऊपर से ऐसे ही लोग हिन्दुओं को असंगठित बताते रहते हैं। इसमें उनकी चिंता अपने समाज के प्रति अज्ञान से उत्पन्न तो है ही, विश्व के अन्य समाजों के विषय में भी निपट अज्ञान से यह उत्पन्न है।

जातियों और सम्प्रदायों में सुविभक्त तथा सार्वभौम नियमों से अनुशासित और इस अनुशासन के प्रति सर्वानुमति से सम्पन्न हिन्दू समाज विश्व का सर्वाधिक संगठित समाज है।

साभार- https://www.bhartiyadharohar.com/ से